17

स्वस्ति पन्थामनुचरेम

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज को सुस्थिर एवं सम्पुष्ट बनाने के लिए यह आवश्यक है कि सभी व्यक्ति परस्पर प्रेम भाव से रहें, सभी मिलजुलकर रहें। कोई किसी से द्वेष न करे। कोई किसी के धन का हरण न करे। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे लोगों को अपने जैसा माने तथा अपने को दूसरों जैसा।

समाज के सदस्यों में परस्पर प्रेमभाव तथा हितभावना से विश्वबन्धुत्व में वृद्धि हो सकती है। भारतीय संस्कृति के आधारभूत संस्कृत के ग्रंथों में इस प्रकार के उपदेश दिए गए हैं कि मनुष्य को मित्रता की भावना बढ़ाने के लिए परस्पर किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए। प्रस्तुत पाठ में हम इसी प्रकार के मंत्रों की जानकारी प्राप्त करेंगे जिनमें विश्वकल्याण की भावनाएँ प्रदर्शित की गई हैं।

उद्देश्यानि

इमं पाठं पठित्वा भवान्/भवती

- समाजस्य सम्पुष्ट्यै क्रियमाणानि कार्याणि लेखिष्यति;
- पाठे उद्धृतानां मन्त्राणाम् अन्वयं करिष्यति;
- विश्वबन्धुतायाः वृद्ध्यै पाठगतान् निर्देशान् स्वशब्दैः लेखिष्यति;
- समानार्थकसूक्तिभिः सह मन्त्राणां मेलनं करिष्यति।

टिप्पणी

क्रियाकलापः 17.1

चित्र 17.1: विद्यार्थियों को वेदों के मंत्रों का उच्चारण तथा अध्ययन कराते हुए शिक्षक

1. पाठारम्भे वयम् इमां प्रार्थनां पठितुं/गातुं शक्नुमः-

   सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै।

   तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।

2. निम्नलिखितवाक्यांशान् मेलयत-

(i) सह नौ	क. करवावहै
(ii) सह वीर्य	ख. विद्विषावहै
(iii) तेजस्वि नौ	ग. अवतु
(iv) मा	घ. अधीतम् अस्तु

17.1 इदानीं मूलपाठं पठामः

प्रथमः एकांशः

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।1।।

शब्दार्थाः

संगच्छध्वम् = तुम सब साथ साथ चलो। संवदध्वम् = तुम सब साथ बोलो, वः = तुम्हारे, मनांसि = मन, संजानताम् = ज्ञान प्राप्त करें, संजानाना = ज्ञान प्राप्त करते

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनोः यथा वः सुसहासति।।2।।

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि।।3।।

द्वितीयः एकांशः

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।।4।।

मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।।5।।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।6।।

बोधप्रश्नाः

1. **अधोलिखिताः पंक्तीः मेलयत**

स्तम्भः 'क'		स्तम्भः 'ख'
क. स्वस्तिपन्थाम् अनुचरेम	1.	मा स्वसारम् उत स्वसा।
ख. तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः	2.	सं वो मनांसि जानताम्
ग. मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्	3.	सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
घ. संगच्छध्वं, संवदध्वम्	4.	सूर्याचन्द्रमसाविव
ङ. मित्रस्याहं चक्षुषा	5.	मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।

2. **निम्नलिखितपदानां हिन्दीभाषायाम् अर्थान् लिखत**

(क) समीक्षे (ख) वः (ग) अघ्नता (घ) मा द्विक्षत्, (ङ) स्वसा

17.2 अधुना पाठम् अवगच्छामः

17.2.1 प्रथमः एकांशः

01 श्लोकतः .... 03 पर्यन्तम्

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।1।।

टिप्पणी

हुए, उपासते = उपासना करते हैं, आकूतिः = चिन्तन, संकल्प, सुसहासति = सुसह + आसति = अच्छी तरह रहता है, स्वस्ति = कल्याण, पन्थाम् = मार्ग को, ददता = दान देते हुए के साथ अघ्नता = हिंसा न करते हुए के साथ, जानता = ज्ञान प्राप्त करते हुए के साथ, संगमेमहि = हम इकट्ठे हो, संगठित हों, ईशावास्यम् = ईश्वर द्वारा आवृत्त ढका हुआ, मा = मत, गृधः = लालच करो, कस्यस्विद् = किसी के भी, चक्षुषा = चक्षु से, आँख से, समीक्षन्ताम् = देखें, समीक्षे = मैं देखता हूँ, समीक्षामहे = हम सब देखते हैं, द्विक्षत् = द्वेष करे, सम्यञ्चः = एकमत वाले, सव्रता = समान संकल्प वाले, वदत = तुम सब लोग बोलें, भद्रया = कल्याण मयी, वाचम् = वाणी को

अन्वयः

संगच्छध्वम्। संवदध्वम्। वः मनांसि संजानताम्। यथा पूर्वे देवा संजानानाः भागम् उपासते।।1।।
(ऋग्वेद 10.191.2)

व्याख्या

संगच्छध्वम् = सम् + गच्छध्वम्। तुम सब अच्छी तरह मिलकर चलो। सम्यक् गच्छध्वम्– ठीक प्रकार से चलो।

संवदध्वम् = सम् + वदध्वम्। तुम सब अच्छी तरह मिल कर बोलो। एक जैसी बात करो। अलग-अलग विवाद मत करो। सम्यक् वदध्वम् = ठीक प्रकार से बोलो। सोच समझ कर बोलो। ऐसा मत बालो जिससे तुम्हें अपनी बात बदलनी पड़े।

वो मनांसि संजानताम् = तुम सब के मन समान हो कर ज्ञान प्राप्त करें। अर्थात् तुम्हारे मन एक समान आगे बढ़े, एक साथ ज्ञान प्राप्त करें।

पूर्वे देवाः= पहले हुए देवता, पहले के लोग। यहां देवता का अर्थ है देवताओं जैसे सद्गुणों वाले विद्वान लोग।

संजानाना भागम् उपासते= ज्ञान प्राप्त करके अपना कार्य संपन्न करते हैं। अर्थात् जैसे पहले के लोग ज्ञान प्राप्त कर अपना कार्य पूरा करते थे वैसे ही आप भी ज्ञान प्राप्त कर अपना कार्य संपन्न करें।

भावार्थः

वैदिक : ऋषिः प्रार्थयते यत् सर्वे मानवाः सहैव गमनं कुर्वन्तु, परस्परं विरोधं त्यक्तवा एकविधम् एव वाक्यं ब्रुवन्तु, सर्वेषां मनांसि अपि एकीभवन्तु सर्वे एकविधम् एव लाभं प्राप्नुवन्तु।

व्याकरणबिन्दवः

संगच्छध्वम् = सम् उपसर्ग, गम् धातु, लोट् लकार, आत्मनेपद, मु.पु. बहुव. (स्वतंत्र रूप से गम् धातु का परस्मैपद में 'गच्छति' आदि रूप चलता है किन्तु सम् उपसर्ग के कारण आत्मने पद में 'संगच्छते' आदि रूप होते हैं।

संवदध्वम् = सम् उपसर्ग, वद् धातु, लोट् लकार, आत्मने पद, म.पु. बहुव. (वद् धातु भी परस्मैपदी में होती है किन्तु यहाँ पर व्यक्तवाणी में उच्चारण के कारण आत्मनेपद हो गया है)

मनांसि = मनस् शब्द नपुं. प्रथमा, बहुव.

सम् = वैदिक भाषा में उपसर्गों का स्वतंन्त्र प्रयोग भी होता है। यहाँ सम् का स्वतन्त्र प्रयोग किया गया है। अन्वय का अर्थ करते समय 'सम्' जानताम् के साथ जुड़ जाता है।

जानताम् = ज्ञा=जा, धातु लोट् लकार म.पु., बहुव. में ताम् प्रत्यय, आत्मने पद

पूर्वे = पूर्वशब्द, सर्वनाम, पुं.; प्रथमा, बहुव.

संजानाना: = सम् + ज्ञा = जा + शानच् = (आन), पुं. प्रथमा, बहुव. (आत्मनेपद,

उपासते उप-उपसर्ग आस् धातु, आत्मने पदी, लट्लकार, प्र.पु. बहुव.

समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो: यथा व: सुसहासति।।2।।

अन्वय:

व: आकूति: समानी (अस्तु), व: हृदयानि समाना (सन्तु) व: मन: समानम् अस्तु, यथा व: सुसहासति। (ऋग्. 10.191.4)

व्याख्या

आकूति: = संकल्प, आकलन, दृष्टि। यहां यह संदेश दिया गया है कि तुम सब का एक जैसा संकल्प हो, एक जैसा निश्चय हो।

समाना हृदयानि= व: हृदयानि समानानि स्यु:। तुम सब के हृदय एक जैसे हों। 'समाना'-का यह प्रयोग वैदिक संस्कृत का है, लौकिक संस्कृत में समानानि होगा। यह हृदयानि का विशेषण है अत: इसका प्रयोग अपने विशेष्य हृदयानि के समान ही होगा।

समानमस्तु.............. सुसहासति= तुम सब का मन एक जैसा हो जिससे तुम आसानी से संगठित हो सको। मैत्री भाव तभी बढ़ सकता है जब सब का मन एक जैसा हो। एक दूसरे के सुख दुख का अनुभव कर सकें। तभी हम आपस में बन्धुभाव को बढ़ा सकते हैं।

भावार्थ:

वैदिक: ऋषि: प्रार्थयते यत् सर्वेषां संकल्प: अध्यवसायश्च एकविध: एव भवतु, सर्वेषां हृदयानि एकविधानि भवन्तु, अपि च सर्वेषां मन: अन्त:करणम् एकविधं समानं भवतु। एवं सर्वे एव समानभावनया सुसहभावनया सुखं प्राप्नुवन्तु।

व्याकरणबिन्दव:

पदपरिचय:

समानी = समान + ङीप्, स्त्रीलि., प्रथमा एकव.,

आकूति: = आङ् = आ उपसर्ग, कू धातु, क्तिन् प्रत्येय, स्त्रीलि., प्रथमा, एकव.

समाना = समान शब्द नपुं. द्वितीया, बहुब. (वैदिक संस्कृत में विभक्ति का लोप होने से समाना हुआ है। लौकिक संस्कृत में समानानि होगा)

सुसहासति = सुसह + असति, सुसह-शोभनतया सहस्थिति: यथा स्यात् तथा सुसह, अव्यय, असति = अस् धातु, लट् लकार, प्र. पु. एकव (लौकिक संस्कृत में शप् = अ का लोप हो जाने से अस्ति रूप होता है किन्तु वैदिक संस्कृत में शप् = अ का लोप नहीं हुआ है अस् + अ + ति = असति, पठति इत्यादि की तरह)

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि।।3।।

अन्वय:

सूर्याचन्द्रमसौ इव स्वस्ति पन्थाम् अनुचरेम ददता, अघ्नता, जानता पुन: संगमेमहि।
(ऋग्वेद, 5.51.15)

व्याख्या

सूर्याचन्द्रमसाविव= जैसे सूर्य और चन्द्रमा विश्व में सब का भला करते हैं, हम भी वैसे ही बनें। हम भी विश्व में सभी का हित करें और इस के लिए स्वस्ति अर्थात् कल्याण के मार्ग पर चलें।

स्वस्ति= सु+अस्ति। जो अच्छा है वह स्वस्ति होता है। इसलिए कल्याण को स्वस्ति कहते है। भवतु तव स्वस्ति = तुम्हारा कल्याण हो।

ददता= दान देते हुए के साथ

अघ्नता = हिंसा न करते हुए के साथ

जानता = ज्ञान संपादन करते हुए के साथ। अर्थात् हम लोग ये सब कार्य करते हुए इकट्ठे होकर रहें, इकट्ठे हो कर चलें। अलग-अलग न हों जिससे विश्व का कल्याण हो और विश्वबन्धुता का प्रसार हो।

इस प्रकार इस प्रथम एकांश के तीनो मन्त्रों में मनुष्यों को यह संदेश दिया गया है कि समाज में सदा मिलकर रहो, ज्ञान पूर्वक कार्य करो। इससे समाज सुदृढ़ होगा और मित्र भाव में वृद्धि होगी।

भावार्थ:

यथा सूर्य : चन्द्रमाश्च अहर्निशं स्वमार्गे भ्रमणं कुर्वत: एवमेव वयं पन्थानं क्षेमेण अनुचरेम। तथा च दानं कुर्वता, अहिंसता बुध्यमानेन च बन्धुना संगमेमहि।

टिप्पणी

व्याकरणबिन्दवः

पदपरिचयः

स्वस्ति = सु + अस्ति, क्रियारूप अव्यय पद है।

पन्थाम् = पन्था शब्द, द्वितीया, एकव.

अनुचरेम = अनु + चर् धातु, विधिलिङ्, उ.पु. बहुव. (परस्मैपद)

सूर्याचन्द्रमसाविव = सूर्यश्च चन्द्रमाश्च, सूर्याचन्द्रमसौ + इव द्वन्द्वसमास, (दो देवताओं का द्वन्द्व समास होने से पूर्वपद सूर्य के अ को दीर्घ हो जाता है। सूर्याचन्द्रमसौ इव में भी समास है, किन्तु कहीं पर भी इसके साथ समास होने पर पूर्वपद की विभक्ति का लोप नहीं होता। औ को आव् सन्धि हो जाती है)

कुर्वता = कृ + शतृ = कुर्वत्, पुं., तृतीया, एकव.

अध्नता = नञ् + हन् + शत् = अघ्नत्, पुं. तृतीया एकव.

ददता = दा + शतृ = ददत्, तृतीया, एकव.

जानता = ज्ञा (जा) + शतृ = जानत्, तृतीया, एकव.

संगमेमहि = सम् उपसर्ग + गम् धातु, विधिलिङ् उ.पु. बहुव., सम् उपसर्ग के कारण गम् धातु का आत्मने पद में प्रयोग।

पाठगतप्रश्नाः 17.1

1. **अधोलिखितान् प्रश्नान् उत्तरत**

(क) वयम् कीदृशं मार्गम् अनुचरेम?

....

(ख) ''युष्माकम्'' इत्यर्थे किं पदम् अत्र प्रयुक्तम्?

....

(ग) ''मनः'' इति पदस्य प्रथमा-बहुवचने रूपं लिखत।

....

(घ) अनुचरेम इति पदस्य अस्मिन्नेव लकारे पुरुषे च एकवचने रूपं लिखत।

....

(ङ) तृतीये मन्त्रे त्रीणि अव्ययपदानि सन्ति, तानि लिखत।

....

2. अधोनिर्दिष्टानां प्रश्नानां उत्तरं लिखत–

(क) प्रथममन्त्रे वेदस्य प्रथम. उपेदशः कः अस्ति?

(ख) नराणां किं किं समानं स्यात्?

(ग) केन सह वयं गच्छेम?

(घ) सूर्यः कीदृशं मार्गम् अनुचरति?

17.2.2 द्वितीय एकांशः

04 श्लोकतः .... 06 पर्यन्तम्

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।।4।।

अन्वयः

जगत्यां यत् किञ्च जगत् इदं सर्वम् ईशावास्यम्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः कस्यस्विद् धनं मा गृधः। यजुः (40.1)

व्याख्या

तेन... – भुञ्जीथाः क्योंकि संसार में जो कुछ है वह ईश्वर का है, हमारा नहीं है इसलिए त्यागपूर्वक उसका उपयोग करना चाहिए अर्थात् हमें जितना चाहिए उतना ही लें उससे अधिक न लें। अपनी आवश्यकता के अनुसार ही वस्तुओं का प्रयोग करें उनका अपने पास संग्रह न करें।

मा गृधः धनम्.........इसकी व्याख्या दो प्रकार से की जा सकती है- (1) कस्यस्विद् धनं मा गृधः किसी के धन का लालच मत करो। अर्थात् किसी के भी धन को ललचाई दृष्टि से मत देखो, उसे अपना बनाने का प्रयास मत करो। दूसरी व्याख्या है- मा गृधः अर्थात् लालच मत करो, जितना तुम्हारे पास है उसी से संतुष्ट रहो। (2) कस्यस्विद् धनम्- यह धन किस का हुआ है? अर्थात् यह धन किसी के पास नहीं रहता, आता है और चला जाता है किसी के पास नहीं टिकता। इसलिए उसका लालच नहीं करना चाहिए।

भावार्थः

अस्मिन् संसारे यत्किञ्चित् विद्यते तत्र सर्वत्र ईश्वरस्य निवासः अस्ति। एतत् मत्वा त्यागबुद्ध्यैव मानवः वस्तूनाम् उपयोगं कुर्यात्।

व्याकरणबिन्दवः

पदपरिचयः

ईशावास्यम् = ईशेन आवास्यम्, तृतीया तत्पुरुष,

जगत्याम् = जगती, स्त्रीलि. सप्तमी एकव.

त्यक्तेन = त्यज् + क्त = त्यक्त, तृतीया, एकव.

भुञ्जीथाः = भुज् धातु, विधिलिङ्ग म.पु.

मा गृधः = एकवचन, आत्मनेपद मा अव्ययपद, निषेधार्थक

गृध् धातु, लङ् लकार, म.पु. एकव. मा पद के कारण अट् अ का निषेध।

मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥5॥

अन्वयः-

सर्वाणि भूतानि मा (माम्) मित्रस्य चक्षुषा समीक्षन्ताम्, अहं सर्वाणि भूतानि मित्रस्य चक्षुषा समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजु. 36.10.18)

व्याख्या

मित्रस्य.......................समीक्षन्ताम् - सारे लोग मुझे अपना मित्र मानें। इस संसार के सारे प्राणी-(मनुष्य और पशु) मुझे मित्र की दृष्टि से देखें।

मित्रस्याहं..........समीक्षे- मैं सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूँ। मित्रता एक-पक्षीय नहीं होती, यह उभय-पक्षीय होती है। वेद में यह प्रार्थना की गई है कि सारे प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें और मैं भी यह कहता हूँ कि मैं स्वयं भी सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूँ।

मित्रस्य...............समीक्षामहे- इस मन्त्रांश में यह बात स्पष्ट हो जाती है कि न केवल संसार के समस्त प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें और न केवल मैं ही विश्व के प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूँ अपितु हम सब संसार के प्राणी एक दूसरे को मित्र भाव से देखें। हम लोग सभी को मित्र की दृष्टि से देखें।

भावार्थः

न केवलं मानवाः अपितु संसारस्य सर्वे प्राणिनः सर्वान् मित्रं मत्वा व्यवहरन्तु। अहमपि सर्वान् प्राणिनः मित्रस्य चक्षुषा पश्यामि/एवं सर्वः सर्वान् प्रति मित्रवत् व्यवहरेत्।

व्याकरणबिन्दवः

पदपरिचयः

चक्षुषा = चक्षुष्, हलन्त नपुंसकलिंग शब्द, तृतीया, एकवचन

समीक्षन्ताम्	=	सम् (उपसर्ग) + ईक्ष् (धातुः) + लोट्, प्रथम पु. बहुवचन
समीक्षे	=	सम् + ईक्ष् + लट्, उत्तम पु. एकवचन
समीक्षामहे	=	सम्+ईक्ष्+लट्, उत्तम पु. बहुवचन

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया॥6॥

अन्वयः

भ्राता भ्रातरं मा द्विक्षत्। उत् स्वसा स्वसारं (मा द्विक्षत्)। सम्यञ्चः सव्रताः भूत्वा भद्रया वाचा वदत। (अथर्व. 3.30.3)

व्याख्या

मा भ्राता....द्विक्षत्– मैत्री भाव पहले परिवार में होना चाहिए। परिवार के लोग परस्पर प्रेम से रहें, बड़े छोटों पर स्नेह रखें और छोटे बड़ों का आदर करें। भाई-भाई परस्पर प्रेम से रहें। एक भाई दूसरे भाई से द्वेष न करे। मा स्वसारमुत स्वसा-बहनें भी परस्पर प्रेम से रहें वे भी परस्पर द्वेष न करें। बहनें विवाह के पश्चात् अलग परिवारों में अलग-अलग स्थानों पर चली जाती हैं। उनकी पारिवारिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिति अलग-अलग अच्छी, सामान्य या दुर्बल हो जाती है। बहनों को एक दूसरे से द्वेष न कर परस्पर प्रेम रखना चाहिए और आवश्यकता के अनुसार एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए।

सम्यञ्च– सभी का मत एक समान हो। परिवार में सभी का मत सदा एक समान नहीं होता। सब को अपना मत प्रकट करने का अधिकार है परंतु अन्त में जो मत ठीक हो वह सभी को मानना चाहिए। अब कौन सा मत ठीक है इसका निर्णय परिवार के मुखिया या बड़े लोगों द्वारा किया जाता है और परिवार के अन्य लोगों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि उस मत को स्वीकार कर उसका पालन करें। परिवार में ''एक ने कही दूसरे ने मानी'' की भावना से कार्य करने पर पारिवारिक सौमनस्य तथा मैत्री भाव बना रहता है और परिवार में सुख समृद्धि की बढ़ोतरी होती है।

सव्रता– परिवार के सभी लोग जब एक मत वाले हो जाएंगे तो वे सारे समान संकल्प वाले होकर एक जैसा ही कार्य करेंगे। सभी समान कार्य करेंगे अर्थात् परिवार का कोई भी सदस्य ऐसा कोई भी कार्य न करे जो दूसरे के कार्य के विपरीत हो या परिवार के दूसरे सदस्यों को हानि पहुंचाने वाला हो।

वाचा..........भद्रया– परिवार में एक दूसरे को अच्छी लगने वाली बातें बोलना बहुत हितकारी होता है। इसलिए वेद का आदेश है कि परिवार के सारे सदस्य-भाई बहन कल्याणकारी-हितकारी और अच्छी लगने वाली वाणी बोलें। वस्तुतः संसार के सभी लोग तो भाई बहन ही हैं सबके साथ ही उत्तम और हितकारी वाणी ही बोलनी चाहिए।

टिप्पणी

भावार्थः

वैदिकः ऋषिः प्रार्थयते यत् कश्चित् कञ्चित् प्रति कदापि द्वेषं न कुर्यात्। भ्राता भ्रातरं स्वसा स्वसारं प्रति द्वेषं न कुर्यात्। सर्वे उत्तमं कार्यं कुर्वन्तुः कल्याणीं भद्राम् एव वाणीं वदन्तु।

व्याकरणबिन्दवः

पदपरिचयः

मा = निषेधार्थक अव्यय

भ्राता = भ्रातृ शब्द, पुं. प्रथमा, एकव.

स्वसा = स्वसृ शब्द, स्त्रीलि. प्रथमा, एकवच.

द्विक्षत् = द्विष् धातु लङ्लकार, प्र.पु. एकव. लङ्, लुङ् एवं लृङ्लकारों में धातु के पहले अट् = अ जुड़ जाता है जैसे लङ्-अपठत्, किन्तु मा शब्दं के योग में अट् नहीं जुड़ता।

भद्रया = भद्रा, स्त्री, तृतीया एकव.

वदत = वद धातु लोट्लकार, म.पु. बहुव.

पाठगतप्रश्नाः 17.2

1. **रिक्तस्थानपूर्तिं कुरुत।**

(क) इदं सर्वं .... ईशावास्यम्।

(ख) मा गृधः .... धनम्।

(ग) सर्वाणि भूतानि मा ....चक्षुषा समीक्षन्ताम्।

(घ) .... स्वसारं प्रति द्वेषं मा कुर्यात्।

(ङ) यूयं सर्वे .... वाचा वदत।

2. **संस्कृते उत्तराणि लिखत।**

(क) जगत् केन व्याप्तम् अस्ति

....

(ख) मनुष्येण कथं भोक्तव्यम्?

....

(ग) सर्वे अन्यान् केन भावेन पश्यन्तु?

....

(घ) भ्राता कं प्रति द्वेषं न कुर्यात्?

....

(ङ) परिवारे जनाः कीदृशीं वाणीं वदन्तु?

....

किमधिगतम्?

- सर्वैः सह मिलित्वा चलितव्यम् परस्परं मैत्रीभावेन च वर्तितव्यम्।
- समाजे समरसतायाः वृद्ध्यै सहमतिः समानमनस्कत्वं च धारणीयम्।
- कल्याणमयः हितकरः च मार्गः अनुसर्तव्यः।
- कस्यचिदपि धनं प्रति लोभः न कर्तव्यः।
- त्यागभावेन वस्तूनाम् उपभोगः कर्तव्यः।
- सर्वेषु प्राणिषु मैत्रीभावः धारयितव्यः।
- परिवारे सर्वे सदस्याः प्रेमभावेन वर्तन्ताम्।
- वैदिकमन्त्रेषु सर्वमानवकल्याणभावना विद्यते।

योग्यताविस्तारः

(क) कृतिपरिचयः

भारतीय चिन्तन का ग्रन्थ रूप सबसे पहले वेदों में मिलता है। ऋग्वेद विश्व का सबसे पहला ग्रंथ है। इस पाठ में वेदों से संकलित मन्त्र रखे गए हैं। वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक और उपनिषद्– यह वैदिक साहित्य हैं। वेद चार हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। ऋग्वेद में इन्द्र, अग्नि, विष्णु, मित्र और वरुण जैसे देवताओं की स्तुतियाँ हैं, और कई दार्शनिक तथा सामाजिक चिन्तन हैं। यजुर्वेद में यज्ञ करने तथा अन्य यज्ञ संबंधी विषयों पर विचार है। सामवेद गायन विद्या का आधार है। ऋग्वेद की ऋचाओं को साम के रूप में सामवेद में प्रस्तुत किया गया है। अथर्ववेद में सामाजिक, राजनैतिक, रोगनिवारक आदि विविध मन्त्र हैं। वेद लगभग ईसापूर्व 5000 वर्ष पहले रचे गए। ब्राह्मणग्रंथों में यज्ञ

टिप्पणी

संबंधी प्रक्रियाओं तथा उनसे संबंधित अन्य विषयों पर विस्तार से लिखा गया है। प्रत्येक वेद का अपना अलग ब्राह्मण ग्रंथ है। शतपथ ब्राह्मण, गोपथ ब्राह्मण एवं षडविंशब्राह्मण आदि कुछ प्रसिद्ध ब्राह्मण ग्रंथों के नाम उल्लेखनीय हैं। यज्ञों के अतिरिक्त आत्मा, परमात्मा तथा ब्रह्म आदि विषयों पर चर्चा आरण्यक ग्रंथों में है। ये ग्रंथ अरण्यों-वनों में लिखे गए। ऋषि लोग गांवों तथा नगरों से दूर रहकर इन विषयों पर चर्चा करते थे अतः इन ग्रंथों का नाम ही आरण्यक हो गया। आरण्यकों का विषय ही व्यवस्थित तथा विस्तृत रूप से उपनिषदों में है। उपनिषदों की संख्या बहुत अधिक है परन्तु ईश केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक एवं श्वेताश्वतर नाम के ग्यारह उपनिषदों का विशेष महत्त्व है। भारतीय संस्कृति को गंभीरता से समझने के लिए वैदिक साहित्य का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है।

(ख) भावविस्तार:

अधोलिखित समानार्थक सूक्तियों को पढ़िये-

(1) समानी प्रपाः सह वोऽन्नभागाः (अथर्व. 3.30.6)

तुम्हारे जल पीने और भोजन करने के स्थान समान हों।

(2) समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। (अथर्व. 3.30.6)

मैं तुम्हें समान स्नेह-पाश में बाँधता हूँ।

(3) समानो मन्त्रः समितिः समानी (ऋग्वेद 10.191.3)

तुम्हारे विचार और सभायें समान हों।

(4) अनुव्रतः पितुः पुत्रो (अथर्व. 3.30.2)

पुत्र पिता के समान संकल्प वाला हो।

(5) अग्ने/नय सुपथा राये। (यजु. 5.36)

हे अग्नि हमें धनसम्पति के लिए सुमार्ग से ले चलो।

(6) सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु। (अथर्व. 19.1.6)

सारी दिशाऐं मेरी मित्र होवें।

(7) माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। (अथर्व 12.1.12)

भूमि मेरी माता है और मैं पृथिवी का पुत्र हूँ।

(8) न स सखा यो न ददाति सख्ये। (ऋ. 10.117.4)

वह मित्र नहीं जो मित्र की सहायता नहीं करता।

(9) मधुमतीं वाचम् वदेयम्। (अथर्व. 16.2.2)

मैं मीठी वाणी बोलूं।

(10) आकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु। (अथर्व 5.3.4)

मेरे मन का संकल्प सत्य हो।

मित्र– संस्कृत भाषा में मित्र शब्द के दो अर्थ है– सूर्य और सुहृद् (दोस्त)। जब मित्र शब्द का अर्थ सूर्य होता है तो यह पुँल्लिग में प्रयोग–होता है मित्रः उदेति'' सूर्य उदय होता है'' मित्रः अस्तं गच्छति'' सूर्य अस्त हो रहा है। सुहृद् के अर्थ में मित्र शब्द नित्य नपुंसकलिंग होता है जैसे मोहनचन्द्रः मम मित्रम् अस्ति''– मोहनचन्द्र मेरा दोस्त है। अयं जनः मम मित्रम्। अयं, और जनः क्रमशः सार्वनामिक विशेषण और विशेषण होने पर भी विशेष्य के अनुसार नपुंसकलिंग नहीं होंगे।

यल्लिगं यद्वचनं या च विभक्तिः विशेष्ये स्यात्।
तल्लिंगं तद्वचनं सा विभक्तिः विशेषणे स्यात्।।

अर्थात् जो लिङ्ग, वचन, एवं विभक्ति विशेष्य के होते हैं वही लिङ्ग, वचन एवं विभक्ति विशेषण के भी होते हैं।

यह नियम यहां नहीं लगेगा।

सम् + ईक्ष् = समीक्ष् आत्मनेपदी धातुः लट् लकारः

पुरुषः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमः	समीक्षते	समीक्षेते	समीक्षन्ते
मध्यमः	समीक्षसे	समीक्षेथे	समीक्षध्वे
उत्तमः	समीक्षे	समीक्षावहे	समीक्षामहे

लोट्

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथम पु.	समीक्षताम्	समीक्षेताम्	समीक्षन्ताम्
मध्यम पु.	समीक्षस्व	समीक्षेथाम्	समीक्षध्वम्
उत्तम पु.	समीक्षै	समीक्षावहै	समीक्षामहै

सर्वम् = सब, सम्पूर्ण (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचनम्
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि

शेष विभक्तियों के रूप पुंल्लिङ्ग की तरह होंगे।

सर्वा = सम्पूर्ण (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्तिः	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सत्पमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु
सम्बोधन	हे सर्वे	हे सर्वे	हे सर्वाः

पाठान्तप्रश्नाः

1. **शुद्धं अशुद्धं वा कथनं चित्वा तत्समक्षं (√) /(×) इति चिह्नं लिखत।**

   (i) वयं मिलित्वा चलेम। ( )

   (ii) अस्माकं मनांसि भिन्नानि स्युः। ( )

   (iii) वस्तूनाम् उपभोगः यथेच्छं करणीयः। ( )

   (iv) सूर्यवत् वयम् सर्वेषां कल्याणं कुर्याम। ( )

   (v) वयम् सर्वदा कल्याणमयीं वाणीं वदेम। ( )

   (vi) भ्राता भ्रातरं प्रति द्वेषं मा करोतु। ( )

   (vii) भगिनी भगिनीं प्रति द्वेषं करोतु। ( )

   (viii) वयं शत्रुभावेन कमपि न पश्येम। ( )

2. **संस्कृतेन उत्तराणि लिखत।**

   (क) अस्माकं मनांसि कीदृशानि स्युः?

   ....

   (ख) जनानाम् आकूतिः कीदृशी भवेत्?

   ....

(ग) वयं कीदृशैः सह संगमेमहि?

....

(घ) अस्माभिः वस्तूनाम् उपभोगः कथं कर्तव्यः?

....

(ङ) वयं परिवारे कथं कार्यं कुर्याम?

....

3. शब्दानाम् अर्थैः सह मेलनं कुर्यात्;

शब्दाः	अर्थाः
(i) आकूतिः	(क) लोभं मा कुरु
(ii) गृधः	(ख) पश्यन्तु
(iii) जगत्	(ग) कल्याणयुक्तया
(iv) समीक्षन्ताम्	(घ) चिन्तनम्
(v) स्वसा	(ङ) युष्माकम्
(vi) भद्रया	(च) अहिंसकेन सह
(vii) वः	(छ) भगिनी
(viii) अघ्नता	(ज) चैतन्ययुक्तम्
(ix) भुञ्जीथाः	(झ) वदत
(x) संवदध्वम्	(ञ) भोगं कुरु

उत्तराणि

बोधप्रश्नाः

1. (i) क + 4, (ii) ख + 5, (iii) ग +1, (iv) घ + 2, (v) ङ + 3

2. (क) मैं देखता/देखती हूँ (ख) तुम्हारा/तुम्हारी (ग) हिंसा न करने वाले के साथ (घ) द्वेष न करें (ङ) बहन

टिप्पणी

पाठगतप्रश्नाः 17.1

1. (क) स्वस्ति, (ख) वः, (ग) मनांसि, (घ) अनुचरेयम् (ङ) इव, स्वस्ति, पुनः

2. (क) सर्वे मिलित्वा चलन्तु/संगच्छध्वम्।

   (ख) आकूतिः, हृदयानि, मनांसि।

   (ग) ददता/अघ्नता/जानता।

   (घ) कल्याणमयं/स्वस्ति।

पाठगतप्रश्नाः 17.2

1. (क) जगत्, (ख) कस्यस्विद्, (ग) मित्रस्य, (घ) स्वसा, (ङ) भद्रया

2. (क) जगत् ईशा व्याप्तम् अस्ति।

   (ख) मनुष्येन त्यागेन/त्यागपूर्वकं भोक्तव्यम्।

   (ग) सर्वे मित्रभावेन पश्यन्तु।

   (घ) भ्राता भ्रातरं प्रति द्वेषं न कुर्यात्।

   (ङ) परिवारे जनाः भद्रां वाणीं वदन्तु।

पाठान्तप्रश्नाः

1. (i) √ (ii) × (iii) × (iv) √ (v) √ (vi) √ (vii) × (viii) √

2. (क) अस्माकं मनांसि परस्परं प्रेममयानि स्युः।

   (ख) जनानाम् आकूतिः समानी स्यात्।

   (ग) वयं ददता, अघ्नता, जानता संगच्छेमहि।

   (घ) अस्माभिः वस्तूनाम् उपभोगः त्यागेन कर्तव्यः।

   (ङ) वयं परिवारे सम्मनस्काः भूत्वा कार्यं कुर्याम।

3. (i) + घ, (ii) + क, (iii) + ज, (iv) + ख, (v) + छ, (vi) + ग, (vii) + ङ, (viii) + च, (ix) + ञ, (x) + झ